

संस्कृतीज्यादः



अनुवादकः

शुक्देव मुनिः



पब्लिकेशन ब्यूरो पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला

(संस्कृतानुवादः)

(संस्कृतानुवाद:)

सैषा पुण्यतमा वाणी,
प्रजानामुपकारिणी।
गुरु-मानस-सम्भूता
गङ्गेव मल-हारिणी॥

अनुवादक

शुकदेव : मुनि:

प्रधानाचार्यचर: गवर्नमैण्ट संस्कृत महाविद्यालय, नाभा (पटियाला) पंजाब



पब्लिकेशन ब्यूरो पंजाबी यूनिवर्सिटी पटियाला



Punjabi University, Patiala

JAPUJI - GURU NANAK Translated from Punjabi into Sanskrit by Shukdev

1992 Copies = 550

Publication Bureau Punjabi University, Patiala

प्राक्कथन

श्री गुरु ''नानक'' पादानां पञ्चम प्रकाश शतकस्य शुभेऽवसरे ग्रथितेयं श्रद्धा-पुष्प-माला सादरं तेभ्यः समर्पयतानेन जनेन महद् गौरवमनुभूयते।

इमां वाणीं प्रति निष्ठा चास्था च गुरु जन प्रेरणा चास्मिन् प्रयासे मूलम् ।

अथ यद्यस्मिन् पुरुषार्थे स्वल्पमात्रायापि सफलोडभविष्यं तदैवं विधानन्यानिप प्रयोगान् जन समक्षं प्रस्तौतुं साहसं समाचरिष्यम्।

प्रमाणं चेह महीयांसो मनीषिण: ।

पटियालास्थ विश्व विद्यालयस्य सुजना सुयोग्याश्चाधिकारिणो धन्यवादार्हाः, येषां सत्येन चोच्चेन चामितेन च सामियकेन च सहयोगेनायममूल्यो रत्नाकरः सह्दय कर-कमल युगं भजते जनश्चायं कृत कृत्यतां लभते।

सुजनाश्चापि मे वन्द्याः, सखायो गुरवस्तथा। येभ्योऽहं प्रेरणां प्राप्य, साहसं कर्तुमुद्यतः॥ कल्याण नन्दनः श्री मान्, तृप्ता गौरव वर्धनः। नानक्याश्च प्रियो भ्राता, श्री-लक्ष्मी-चन्द्रयोःपिता॥

ç

तलवण्डी-महाग्रामे, वेदि-वंश-समुद्भवः। योगी भोगी सदा नामी, बाल-क्रीडा-मनोरमः॥

7

सदानन्दो महाधीर:, दान्त: शान्त: सुलक्षण: । सुलक्षणा प्रियो देव:, ''सच्चा सौदा'' विधायक: ॥

X

रा० बुलार प्रियः स्वामी, नाग च्छाया समन्वितः । सन्तुष्टः संयमी सत्यो, नवादर्श-प्रवर्तकः ॥

4

श्री मूला-प्रिय जामाता, पर-तन्त्र-निवारकः। मनस्वी च सुकर्मा च, नम्रता-मूर्तिः सत्तमः॥ आस्तिको ५द्वैतवादी च, सरलो लोक नायकः । जयराम प्रियो बन्धुः सत्य मार्ग-प्रदर्शकः ॥

''मर्दाना'' प्रिय बन्धुश्च राग-विद्या-धुरन्धरः । हिन्दु मुसलमानानां

समानो गुरुरुत्तमः ॥

Z.

सत्य वक्ता शुद्धमनाः, ईश्वराराधकः परः। कर्म-निष्ठो महायोगी, सतां सुसंगति-प्रियः॥

9

गन्धर्व विद्या तत्त्वज्ञो, रक्षो-वृत्ति-निवारकः । ''लालो'' भक्तो दयासिन्धुः, ''भागोमल्ल'' स्य निन्दकः ॥ १०

व्यवसाय प्रियो भक्तः, आद्यता - शत्रुर्विश्रुतः। देशाटन-प्रियो वाग्ग्मी, सत्य-धर्म-निदर्शकः॥

श्री जपु महिमा

सैषा पुण्यतमा वाणी,
लोकानामुपकारिणी।
गुरु-मानस-सम्भूता,
गङ्गेव मल हारिणी।।
''जपु जी साहिबः'' क्वायं,
क्व च मन्दर्मति ''मुनिः''।
तर्तुमिच्छति पाथोधिं,
गोष्पदो लङ्घनेऽक्षमः।।

पञ्जाबी भाषायां गुरुमुखी लिप्यां ग्रिथतो मूल ग्रन्थो 'जपः' जपु जी जप जी साहिब जपनिसाण आदिभिरादर सूचिकाभिराख्याभि राख्यायते । श्री गुरु ग्रन्थ साहिबस्य प्रारम्भो उनयैव वाण्या प्रवर्तते । अस्यादौ मूल-मन्त्रः समाम्नातः, आदावन्ते च सम्पुट-रूपं महत्त्व पूर्णं श्लोक द्वयं विराजते । तत्रादिमः श्लोकः परमेश्वर श्री हरि महिमानमनु व्याप्तोऽन्तिमं पद्यं च सर्व विशव भातृत्व भावनया अनुस्यूतमास्ते । अत्र अष्टात्रिंशत्संख्या परिमितानि सोपानानि पउड़ी आख्यानि सन्ति । धर्म ज्ञान श्रम कर्म सत्येति पञ्चानां खण्डानां विवेचनात्मिकेयममरा वाणी, लोक प्रिया भारती, विश्व जनीनाऽस्ति, या हि सरलायां सरसायां साधारणायां वाग्धारा सम्पन्नायां जनता-जनार्दन भाषायां च समुल्लिखिताऽऽस्ते ।

्षा गम्भीरा च प्रौढ़तमा च गुरोरचना दार्शनिकानां च धार्मिकानां च मनो वैज्ञानिकानां चाध्यात्मिकानां चानुभूतीनां सारः समाम्नातस्तद् मर्म पारगै: पण्डितै: । इह हि महर्षि प्रणीत सूत्र ग्रन्थानामिव वाक्यानां रचना, अत एवास्य पद संघटना, शब्द चयनिका च स्वल्पाक्षरा सारवती, विश्वतोमुखीनास्ति ''मितं च सारं च वचो हि वाग्गिता ''इतीमां लोकोक्तिं च सर्वथा चरितार्थयित ।

प्रस्तुत ग्रन्थस्य स्वाध्यायेन पुण्यं समेधते पापं च क्षीयते, विविधा मनोरथाश्च पूर्यन्ते ज्ञान भिन्ति कर्मादयो विषयाश्च प्रकाश्यन्ते। पाठक मानसानां संशयानपनीयात्म विश्वासोत्पादन शीला, पारमार्थिक तत्त्व परिपूर्णेयं नानकी वाणी सिक्स धर्मस्य प्रस्तावनेति सगौरवं वक्तुं प्रभूयते। संगीतमयी चेयं गुरुवाणी श्रवण मनन निविध्यासनाविभिरभ्यासवतां स्वान्तेषु कामप्यपूर्वाभाव तरिङ्गणीं वेगवतीमातनुते । अत्र काव्य संगीत दर्शनानामनुपमस्विवेणी- संगम इति तदनुभवविदां धारणा।

जपः सुशीलितो येन, मूल मन्त्रश्च जप्यते । गृहस्थी ब्रह्मचारी वा, स भवेत् सम्पदां पदम् ॥

अस्मिन्न मूल्ये ग्रन्थरत्ने मानवजीवनस्य सत्यानां चोच्चानां चादर्शानां प्रतिपादनं सबलायां सफलायां च लोक-भाषायां कृतमस्ति । एषा महा-महिम-शालिनी गुरोर्वाणी नित्यं नवा नवा शुक्लपक्षचन्द्रकलेव प्रतिदिनं जिपमनः पाथोधि माप्नावयति । अस्यां दिशि स्वाध्याय शीलानां महानुभावाना मनुभवोऽपोहितुं न शक्यते ।

जप-सार

परम पिता परमेश्वर अकाल पुरुष सत्य है:''आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥''

मानव जीवन का लक्ष्य, मन्तव्य, असत्य का विध्वंस करके सच्चा सुच्चा बनना है। श्री गुरु नानक देव जी के मतानुसार प्रचलित आडम्बर पूर्ण विधियों को त्याग कर केवल, परमात्मा के आदेशानुसार जीवन व्यतीत करना, लक्ष्य प्राप्ति का सरल एवं सुगम उपाय है। यह आदेश हर घड़ी, प्रति-क्षण, हर समय प्रत्येक प्राणी के साथ विराजमान है।

''हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥''

पर यह सुगमता से तथा तुरन्त ही इन चर्ममय चक्षुओं से नहीं देखा जा सकता । इस पवित्र कार्य के लिए दिव्य दृष्टि अपेक्षित है । गुरु महाराज का आदेश जीवों की उत्पत्ति, पालना, संहार, कर्म भाव और गति-प्रगति में सर्वत्र सदा विद्यमान रहता है ।

उस अलौकिक गुणों वाले, सकल सृष्टि के आदेश-कर्ता, अकाल पुरुष से प्रेम करने का, भेंट करने का सरल मार्ग केवल राम नाम का जप करना, जगत् में विद्यमान उसकी सत्ता को पहचानना तथा झूठे प्रदर्शनों से दूर रहना है। इस के लिए मनुष्य गुरु शिक्षा का श्रवण मनन करे, अमूल्य गुणों को प्राप्त करे और जीवन को सफल बनाये।

गुरु शिक्षा का मनन करने से मानव में नैतिक गुण स्वयं आने लगते हैं। अच्छाई और बुराई का उसे ज्ञान प्राप्त होने लगता है। अभ्यासी की आत्मा जाग पड़ती है। गुण-अवगुणों की पहचान कर वह एक ऐसा पन्थ ढूँढ लेता है, जो उसे सदैव मृत्यु भय से दूर रखता है। इस राह पर चलते चलते अन्त में जीव परमानन्द की अवस्था को पा लेता है।

''मंने की गति कही न जाई ॥''

परमात्मा का नाम जपना या उसका स्मरण करना छू मंत्र का काम नहीं । यह अनेक पड़ावों वाला एक मार्ग है । वाणी में खण्ड से तात्पर्य पड़ाव से है । सर्वप्रथम आत्म-जागरण होने पर जिज्ञासु शिष्य की दृष्टि प्रकृति के तत्त्वों और उनके प्रत्यक्ष कार्यों पर पड़ती है । उसे तब केवल कुदरत के सभी कार्यों में एक प्रचलित नियम दिखाई पड़ता है ।

''जैसे जैसे कारण एकत्रित हों वैसे ही कार्य बनते हैं''

इस नियमानुसार गुरु का शिष्य नैतिक नियम अपनाने लगता है, जो सदा अटल है। अब उसकी बुद्धि इस विचार पर पक्की हो जाती है कि सारा निर्णय कर्मों के अनुसार होता है।

''करमी करमी होइ वीचार''

तत्पश्चात् विचार खण्ड में पहुंचते ही साधक की आँखें खुल जाती हैं। इस कर्म-भूमि के अतिरिक्त अनेक कर्म-भूमिएँ उसे दृष्टि गोचर होने लगती हैं। वहाँ बहुत से तत्त्व काम करते दिखाई पड़ते हैं। उसे अपनी पहचान हो जाती है तो फिर वह अपने अतीत के चित्र को रुचि से देखने लगता है।

पहले धर्म-कर्म की भावना वा प्रेरणा कर्तव्य भाव से ही थी, जहां दुष्परिणामों का भय था। अब धर्म कर्म का मार्ग इस लिए अच्छा लगता है क्योंकि महापुरुष भी इस पर चलते आए हैं।

अब धर्म-पक्ष की प्राप्ति होने पर साहस पूर्वक, दृढ़ता से इस मार्ग पर चलने के लिए पुरुषार्थ की आवश्यकता है। परिश्रमी गुरु शिष्य अपनी प्रवृत्तियों को, अपने विचारों को इस प्रकार साँचे में ढाल लेता है कि वह पराए दु:ख अन्याय अत्याचार आदि आदि को देख कर सहसा द्रवित हो उठता है, मोम बन जाता है, परोपकारी सुभट योद्धा बन जाता है।

"करम खण्ड की बाणी जोरु ॥"

बस, यही खण्ड उस सत्य स्वरूप पिता से एकाकार होने का है। यह अन्तिम पड़ाव है परम पिता परमात्मा 'वाहिगुरु' से साक्षात्कार का -

> ''जिनी नाम धिआइआ गए मसकति घालि । नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥''

> > आत्म-निवेदनम्

ξ

नानकं सादरं नत्वा, तदुक्ती: सुविभाव्य च। गुरु-नानक-वाणीयं, देव-वाण्या प्रकाशिता॥

Ş

गुरु-वाणी-प्रचारार्थे, देव-वाणी-प्रसारणे । लिखितो जय भांवार्थो, गुरोरेव प्रसादत: ॥

₹

विषयेभ्यो निवृत्त्यर्थं, गुरु-वाण्यर्थं लब्धये। जपो गुरु-निदेशेन, संस्कृतेन प्रकाशित:॥

×

उपहस्येऽथवाऽसद्भिः, प्रमादो वाऽस्तु मे धियः। 'जप जी साहिबे' स्नेहः स्थिरो मे हिमवानिव।।

4

मान्यते हि यथा लोके, गीता भागवतोत्तमै: जप जो मान्यते तद्वद्, गुरो: शिष्यै: सदानतै: ॥

Ę

गुरु-नानक-वाणीयं, प्रात: काले शुचौ मुखे । श्रुता वा पठिता वाडपि, धन-धान्य-सुत-प्रदा ॥

ভ

पूजिता संस्तुता चाऽपि, विध्न-पाप-भयावहा । गुरु-मानस-सम्भूता, गड्गेव भक्तारिणी ॥

6

कर्म-विज्ञान भक्तीना माकरो मधुरो बहुः। मुख्या वाणी गुरोरेषा, पाप-दु:ख-निवारिणी।।

९

सुखानामथ पुण्यानां श्रेयसां प्रेयसां प्रेयसां पदम् । अधीता भाविता चाऽिप, तनोतु जगते हितम् ॥

ξo

विदुष: प्रार्थये भूय:, सत्याऽसत्य-विवेकिन:।

परामर्श प्रदानार्थं, स्वीय सम्मति हेतवे॥

११

कर्मेदं सुगमं नास्ति, गुरोरिच्छा बलीयसी। दृशैव क्रियते सद्यो, गुरुणा सफलो नर:॥

समर्पणम्

महा गुरो ! महावाहो ! महायोगिन् ! महामुने !

कवे ! कमल पत्राक्ष ! भक्तानां च शिरोमणें ! आर्यावर्ते महादेशे, पंजाबे 'शेख्' मण्डले । तलवण्डी महातीर्थे, कार्तिक पूर्णिमा दिने ॥ महतामन्वये जात ! कालू-वंश-दिवाकर। नानक ! नानकी भ्रातः ! तृप्ता-पुत्र ! नमोऽस्तुते ॥ राजर्षि: सत्प्रियो धोरो, देश-भक्तः सुधारकः । अनेक-देश-भाषाणां, ज्ञाता वक्ता विचारकः ॥ नीतिज्ञो निर्भयो नेता, सन्तानामपि सत्तमः। पाखण्डन खण्डन: साधु:, ''सच्चा सौदा'' विधायक: ॥ एकोंकार-जपाधारो,दैतवाद-विखण्डन:। हिन्दु-मुसलमानानां,मिथ्याडम्बर-भञ्जनः॥ संगति: पंक्तिरित्ये, पृष्टे लोक-हितेच्छया । येन तस्मै नमस्कुर्मो नानकाय महर्षये ॥ त्वत्तः प्राप्तमिदं तत्त्वं, गुरो ! तुभ्यं समप्यति । ै गृहाणेदं कृपा-पूर्व, मस्माननु गृहाण च ॥

> शुकदेव ''मुनि'' प्रधानाचार्य चरः गवर्नमैण्ट संस्कृत महाविद्यालयः, नाभा

(संस्कृतानुवादः)

१ ओं सितनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरित अजूनी सैभं गुरप्रसादि ॥ जपु आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥

एकोंकारो हि कर्ता य:, पुरुष: सत्य नामक: ।
निर्भयश्चाथ निर्वैर:, कालातीतो निराकृति: ॥
अयोनिश्च स्वयम्भु: स गुरु रित्यादि नामक: ।
गुरोस्तस्य प्रसादेन, 'नानकेन' प्रकाश्यते ॥
'जपजी साहिबः' पुण्यो, लोकेभ्यो हितमिच्छता ।
आदि-सत्य: स लोकेशो, युगादौ सत्य एव च ॥
अस्ति सत्यो युगान्तेऽपि, भविष्य सत्य ईरितः ।
आदौ मध्ये तथा चान्ते, 'नानकः' सत्य एव सः ॥

पहली पउड़ी

सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार ॥
चुपै चुपि न होवई जे लाइ रहा लिवतार ॥
भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार ॥
सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलैनालि ॥
किव सचिआरा होई ऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥
हुकिम रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥

प्रथमं सोपानम्

केवलेन विचारेण, बुद्धौ नायाति स प्रभुः ।
गुरुः सत्य-स्वरूपो यो, लक्षशोऽिप विचार्यताम् ॥
मौनेनापि न तस्याप्तिः, ध्यान योगो निरर्थकः ।
सम्भवेद् ध्यान मौनाद्यैः, सत्यस्याप्तिः कथं गुरोः ?
लिप्सुना सार्वभौमस्य, पुंसा जातु चनापि नो ।
सत्यः स शक्यते लब्धुं, कोटिशोऽिप प्रयत्यताम् ॥
चातुरीभिरनेकाभिः, सहस्रै लिक्ष-कोटिभिः ।
सत्यो न शक्यते प्राप्तुं, सत्येनाप्तिस्तु केवलम् ॥
कथं सत्यो भवेत्प्राणी ? मिथ्याचारो न वा कथम् ?
गुरुणा शिष्य-सम्बन्धे, कथं विध्नो विहन्यताम् ?
'नानकः' या गुरोराज्ञा, जन्मना सह जायते ।
सर्वथा हि तदाज्ञायाः पालनं गतिरुत्तमा ॥

दूसरी पउड़ी

हुकमी होविन आकार हुकमु न कहिआ जाई ॥ हुकमी होविन जीअ हुकिम मिलै बिडआई ॥ हुकमी उत्तमु नीचु हुकिम लिखि दुख सुख पाईअहि ॥ इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदाभवाईअहि ॥ हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ॥ नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ॥

द्वितीयं सोपानम्

गुरोर्येन निदेशेन, साकारः सकलोभवः ।
स निदेशः प्रभोस्तस्य, वाचातीतः समीरितः ॥
आज्ञया जायते जीवो, गुरोस्तस्य महात्मनः ।
आज्ञयैव च तस्यैव, महत्त्वं याति मानवः ॥
कोऽपि तस्य निदेशेन, मानवो भद्रभावनः ।
अपरो जायते जीवः, सर्वथा नीच-वासनः ॥
आज्ञानुसारतस्तस्य, सुखं दुःखं शरीरिणः ।
शुभाऽशुभं नरो याति, गुरोरिच्छा बलीयसी ॥
गुरोरेव निदेशेन, मुक्ति माप्नोति मानवः ।
आदेशेन विभोस्तस्य, कोटि कीटादि योनयः ॥
सकलोऽपि जनो लोके, गुरोराज्ञानुसारकः ।
न जातु जायते किचिद्, गुरोराज्ञां विना भवे ॥
''नानकः'' यो गुरोराज्ञां, वेद विज्ञः स एव हि ।
अहंभावो न तस्याऽस्ति, कर्तास्मीति न बन्धनम् ॥

तीसरी पउड़ी

गावै को ताणु होवै किसै ताणु ॥
गावै को दाति जाणै नीसाणु ॥
गावै को गुण विडआईआ चार ॥
गावै को विदिआ विखमु वीचार ॥
गावै को विदिआ विखमु वीचार ॥
गावै को साजि करे तनु खेह ॥
गावै को जीअ लै फिरि देह ॥
गावै को जापै दिसै दूरि ॥
गावै को वेखै हादरा हदूरि ॥
कथना कथी न आवै तोटि ॥
कथना कथी न आवै तोटि ॥
देदा दे लैदे थिक पाहि ॥
जुगा जुगंतिर खाही खाहि ॥
जुगा जुगंतिर खाही खाहि ॥
हुकमी हुकमु चलाए राहु ॥
नानक विगसै बेपरवाहु ॥

तृतीयं सोपानम्

गुरो यों लभते त्राणं, गुरो यीस्मिन् कृपालुता । त्रातेति तं गुरुं स्तौति, स जनः सततं नतः ॥ कोडपि गायत्यमुष्याथ, दातृत्वं शुभ लक्षणम्। पुन: पुनर्विविच्याह, धन्यो दाता गुरु महान् ॥ कर्तापुरुष इत्याह, गुण-गान-परोऽपर:। महिमानं गुरोब्र्ति, चातुरी-मोहितोऽपर: ॥ कोऽपि सांख्येन योगेन, तर्केश्च विविधैर्मशम्। न्यायेन वा विशेषेण, विषमं वक्तुमिच्छति ॥ निर्मिनोति गुरुर्देहं, धूलिसात्कुरुते च तम्। मृतो जीवो न चायाति, केऽपीत्थं वा प्रचक्षते ॥ हरतेऽसून्युनर्दत्ते, धन्यो दाता गुरु र्महान्। यः पुन भीववादीत्यं, गुरुं स्तौति भृशंनतः ॥ दूरे गुरु र्निराकार, इति कोऽपि प्रगायति । अविद्रे गुरु: सेत्य, मन्यो हर्षेण शंसति ॥ परं गुरो गुण ग्रामो, नान्तं यातः कथंचन। कोटिश: कोटिभि: प्रोक्तो, नान्तं याति न यास्यति ॥ दाता सदा ददात्येव, प्रतिदाता न दृश्यते । युगान्तेभ्यः समारभ्य, दात्रादत्तं नु भुज्यते ॥ गुरोराज्ञा तु प्राक् चाडपि, सम्प्रत्यपि च तादृशी। ''नानकः'' स प्रभुर्नित्य मकालो मोदते भृशम् ॥ रचयन्मधुरां सृष्टिं, श्रान्तिमेति न जातुचित्। प्रसन्नो मधुर: साधु, र्गुरु वै स निरञ्जन: ॥

चौथी पउड़ी

साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु ॥ आरवहि मंगिह देहि देहि दाति करे दातारु ॥ फेरिकि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु ॥ मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणिधरेपिआरु ॥ अंमृत वेला सचु नाउ विडआई वीचारु ॥ करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु ॥ नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ॥

चतुर्थं सोपानम्

श्र्यते स प्रभुः सत्यः, सत्यनाम्ना य उच्यते ।
भावितो विविधै भविः, वस्तुत एक एव सः ॥
देहि देहि गुरो ! देहि, भाषते याचते जनः ।
दाता कामान्ददात्येव, निःसंकोचं तदर्थिनः ॥
अय केन प्रकारेण, दर्शनं स्याद् गुरोः स्फुटम् ?
वदानि कां नु तां वाचां ? यया प्रीतो गुरु भवित् ?
प्रातः सायं भजेन्नित्यं, सुखं साधु शुभावहम् ।
गेया गुणा गुरोर्नित्यं, कालोनेयः सुसंगतौ ॥
कर्मणा जायते जावः, कर्मणैव च लीयते ।
परं मोक्ष-पद-प्राप्ति, गुरो योगन जायते ॥
जायते स स्वयं सत्यो, गुरुरेको महीतले ।
निरञ्जनो निरीहश्च, प्रभुरित्याह 'नानकः' ॥

पांचवीं पउड़ी

थापिआ न जाइ कीता न होइ ॥
आपे आपि निरंजनु सोइ ॥
जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु ॥
नानक गावीऐ गुणी निधानु ॥
गावीऐ सुणीऐ मिन रखीऐ भाउ ॥
दुखु परहिर सुखु घरि ले जाइ ॥
गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई ॥
गुरु ईसह गुह गोरखु बरमा गुह पारबती माई ॥
जे हउ जाणा आंखा नाही कहणा कथनु न जाई ॥
गुरा इक देहि बुझाई ॥
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥

पञ्चमं सोपानम्

स्थापना शक्यते कर्तुं, गुरो जीतु न कुत्रचित्। स्थानेन केनचि च्चाइपि, न स बद्धो निरञ्जन: ॥ सेवित: पूजितो येन, स गुरो: सत्य-सेवक: ॥ गुणागारो गुरु: सेव्य:, शाश्वतीं शान्ति मिच्छता ॥ गेयं गानं गुरोर्नित्यं, पेयं तंस्य गुणामृतम् । भक्ति-भावो गुरोस्तस्य, चित्ते धार्यो विशेषत: ॥ दुःखं विलीयते तेन, सुखं सम्यक् प्रजायते । श्रवणेन च गीतानां, प्रसादस्तस्य जायते ॥ 'गुरुवाणी' स्वयं नादः, सैव वेदः सनातनः। गुरु वाणी मनुव्याप्त:, स्वयं ज्योति र्निरञ्जन: ॥ गुरुरेव स्वयं शम्भु, गुरु गौरख एव च । ब्रह्मा च पार्वती माता, गुरु रेवाभिधीयते ॥ ज्ञातोऽपि शक्यते नैव, वाचाऽऽख्यातुं गुरु र्महान् । महतो महिमा तस्य, वाचातीत: समीरित: ॥ 'नानकः' स गुरुः प्राह, वातमिकां सनातनीम्। संकेतो गुप्त मन्त्रो वा, शिरोधार्य: सदा गुरो: ॥ सर्वेषामेव जीवानां, गुरुर्दाता महेश्वर:। कृतज्ञेन सता पुंसा, विस्मर्तव्यो न जातुचित् ॥

छेवीं पउड़ी

तीरिथ नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी ॥ जेती सिरिठ उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई ॥ मित विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी ॥ गुरा इक देहि बुझाई ॥ सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥

षष्ठं सोपानम्

तीर्थे स्नानं महा पुण्यं, गुरोर्थेन कृपालुता।
गुरो यींद प्रसादो न, तत्र स्नानेन कि फलम् ?
यावती रचना तेन, सृष्टा दृष्टि मुपैति मे।
कर्मिभर्लम्यते सर्वं, न किञ्चित् कर्मणा विना।।
यद्यस्ति सा मनुष्यस्य, गुरोः शिक्षा हृदिस्थिरा।
बुद्धावेव प्रजायन्ते, रत्नानि मौक्तिकानि च।।
गुरुरेव महातीर्थो, गुरुरेव महाक्रिया।
आद्रियेत गुरुं नित्यं, श्रेयः प्रेयोऽभिलाषवान्।।
नानकः स गुरुः प्राह, वातिमकांमहीयसीम्।
संकेतो गुप्त मंत्रो वा, वाणी धार्या गुरो हृदि।।
सर्वेषामेव जीवानामेको दाता गुरुः स्मृतः।
'नानकः' स कृतज्ञेन, विस्मर्तव्यो न जातुचित्।।

सातवीं पउड़ी

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ।।
नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ॥
चंगा नाउ रखाई कै जसु कीरति जिंग लेइ॥
जे तिसु नदिर न आवई त वात न पुछै के॥
कीटा अंदिर कीटु किर दोसी दोसुधरे॥
नानक निर गुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे॥
तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे॥

सप्तमं सोपानम्

पुंसो युग-युगायाम, मायु र्दीर्घृमथो भवेत्। ततो दीर्घतरं वार्डिप, यदि जीवतु मानवः ॥ नव खण्डेषु विख्यातः, सर्वेजीवा वशानुगाः । ख्यातः सुसंज्ञया लोके, मान-कीर्त्योश्च भाजनम् ॥ परं यदि कृपा-दृष्टि र्गुरोर्निस्ति वृथा जनुः । गुरोः कृपां विना लोके, वार्तां कोर्डिप न पृच्छिति ॥ कीटानामिप कीटः स, नीचानामग्रणीः स्मृतः । दोषवन्तः स्वयं नीचा, महादोषं वदन्ति तम् ॥ नानकः कुरुते सद्यो, निर्गुणान् गुणिनोगुरुः । प्रसन्नः स गुरु लोके, ददाति गुणिने गुणान् ॥ परं नास्ति नरो लोके, तादृशो गुणि-सत्तमः । गुरवे यो गुणान्दातुं, प्रभुर्दाता गुरुः स्वयम् ॥ गुरवे यो गुणान्दातुं, प्रभुर्दाता गुरुः स्वयम् ॥

आठवीं पउड़ी

सुणिए सिध पीर सुरिनाथ ॥
सुणिए धरित धवल आकास ॥
सुणिए दीप लोअ पाताल ॥
सुणिए पोहि न सकै कालु ॥
नानक भगता सदा विगासु ॥
सुणिए दूख पाप का नासु ॥

अष्टमं सोपानम्

श्रुत्वा नरो गुरोः शिक्षां, जानाति परमार्थतः ।
सिद्ध-पीर सुरेशानां, वार्तानां मर्म यादृशम् ॥
गुरोरेव स जानाति, धरातत्त्वं यथार्थतः ।
वृषभः कः ? कथं कुत्र ? नभो वेद च वस्तुतः ॥
निपीय सादरं वाणीं, द्वीपानां मर्म गाहते ।
मध्यं वेत्ति च पातालं, गुरुदेव-प्रसादतः ॥
चित्तेकृत्य गुरोर्वाणीं, मृत्यु-भीत्याः प्रमुच्यते ।
वाण्याश्च श्रवणेनैव, महामोदः प्रजायते ॥
श्रवणेनैव लीयन्ते, दुःख पापानि सर्वथा ।
विलीयते मोहरात्रि रुदिते ज्ञान भास्करे ॥
महिमानं गुरोर्येतुनराः, श्रृण्वन्ति सादरम् ।
क्लेशा अवगुणास्तेषां, दूरं यान्ति भयदुताः ॥

नौवीं पउड़ी

सुणिऐ ईसरु बरमा इंदु ।।
सुणिऐ मुखि सालाहण मंदु ।।
सुणिऐ जोग जुगित तिन भेद ।।
सुणिऐ सासत सिम्नित वेद ।।
नानक भगता सदा विगासु ।।
सुणिऐ दूख पाप का नासु ।।

नवमं सोपानम्

गुरोर्वाचं समाकण्यं, वेद मर्म यथार्थतः ।
कः शिवः ? कश्च वा ब्रह्मा ?, महेन्द्रश्चाथ कः स्मृतः ?
महागुरोः स्तुतेरग्रे, तेषां मन्दायते स्तुतिः ।
वर्तते हि गुरु लेकि, सर्वोपिर सगौरवम् ॥
स्तुतिं महागुरोः पीत्वा, तनु-मर्मावगम्यते ।
ईशेन सह सम्बन्धे, तनु भेदोऽपि बुध्यते ॥
वेदानामथ शास्त्राणां, स्मृतीनां वापि तत्त्वतः ।
प्रामाण्यं यादृशं लोके, गुरु-वाक्येन वेद्यते ॥
'नानकः' मोदते भक्तः, प्रसादं चाऽधिगच्छिति ।
श्रवणेन गुरोर्वाण्या, दुःख-पापं विनश्यति ॥
महिमानं गुरोर्ये तु, नराः श्रृण्वन्ति सादरम् ।
क्लेशा अवगुणास्तेषां, दूरं यान्ति भय-दुताः ॥
श्रवणेनैव लीयन्ते, दुःख-पापानि सर्वथा ।
विलीयते मोहरात्रि रुदिते ज्ञान भास्करे ॥

दसवीं पउड़ी

सुणिऐ सतु संतोखु गिआनु ॥
सुणिऐ अठसिठ का इसनानु ॥
सुणिऐ पिंड पिंड पाविह मानु ॥
सुणिऐ लागै सहिज धिआनु ॥
नानक भगता सदा विगासु ॥
सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥

दशमं सोपानम्

सत्य-सन्तोष-ज्ञानानि, प्राप्यन्ते गुरु-दीक्षया ।
गुरु दीक्षा धृता चित्ते, तीर्थ स्नानसमा मता ॥
गुरु वाणी सुधां पीत्वा, मान माप्नोति मानवः ।
रसोऽभिव्यज्यते स्वान्ते, ब्रह्मानन्द-सहोदरः ॥
प्रसादो जायते तस्य, योग लीनस्य 'नानकः' ।
श्रवणेन गुरो विण्या, दुःख पापं विनश्यति ॥
सेविनश्च गुरोर्वाण्या, महिमामृत पायिनः ।
उपसर्गा विलीयन्ते, तमांसीवारुणोदये ॥

ग्यारहवीं पउड़ी

सुणिऐ सरा गुणा के गाह ।।
सुणिऐ सेख पीर पाति साह ॥
सुणिऐ अंधे पावहि राहु ॥
सुणिऐ हाथ होवै असगाहु ॥
नानक भगता सदा विगासु ॥
सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥

एकादशं सोपानम्

गुरोः शिक्षां समाकर्ण्य, गाहते गुण-सागरान् ।
गुरु-शिक्षा-प्रसादेन, व्यसनेषु न मुह्यति ॥
श्रुत्वा महा-गुरो विणीं, शेखः पीरो यतीश्वरः ।
धर्मस्य जगतो वाऽपि, भवेनेता प्रजायते ॥
गुरु-वाण्यञ्जनाभ्यक्तो, द्रष्टुं शक्तो ह्यलोचनः ।
मूढान्मूढतरो वाऽपि, जायते पण्डितोत्तमः ॥
विपदोर्लघते पंगुः, पारं याति महोदधेः ।
स्याति याति प्रसादं च, प्राप्नोति पदवीं पराम् ॥
'नानकः' रमते सत्ये, मोदते गुरु सेवकः ।
श्रवणेन गुरोर्वाण्या, दुःख पापं विनश्यति ॥

बारहवीं पाउडी

मंने की गति कही न जाइ ॥
जे को कहै पिछै पछुताइ ॥
कागदि कलम न लिखणहार ॥
मंने का बहि करिन वीचार ॥
ऐसा नामु निरंजन होइ ॥
जे को मंनि जाणै मिन कोइ ॥

द्वादशं सोपानम्

या गित जीयते पुंसो, गुरोराज्ञानुसारिणः। वाचामगोचरा सा तु, मूकस्यैव रसो मधुः ॥ साहसं कुरुते यस्तु, व्याख्यातुं गित मद्भुताम् । पश्चात्तपेदनाख्यानाद्, गते स्तस्याः स पूर्णतः ॥ वाचामगोचरस्तस्य, मिहमा वादि मण्डले । लिखितुं च न वा शक्यो, लेखिन्या पत्र-पंक्तिषु ॥ ईदृशः पावनः शब्दो, वाचातीतो विभाषितः । मनसा धारकस्तस्य, 'नानकः' विरलो भुवि ॥

तेरहवीं पउड़ी

मंनै सुरित होवै मिन बुधि ॥ मंनै सगल भवन की सुधि ॥ मंनै मुहि चोटा ना खाइ ॥ मंनै जम कै साथि न जाइ ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मिन कोइ ॥

त्रयोदशं सोपानम्

परासत्या शुचि वृत्ति, गुंरु-शिक्षाऽनुसारिणः ।
मितः प्रकाशते शुद्धा, चेतश्चैतन्य मश्नुते ॥
सकलं वेद वा तत्त्वं, लोक यात्रां च सर्वथा ।
जानीते सकलं सारं, संसारस्य यथार्थतः ॥
मत्वा शिक्षां गुरोः प्राणी, हानिं याति न किहिचित् ।
पापाद् बिभेति जीवोऽसौ, यातना नाधिगच्छाति ॥
पूतं निरञ्जनं नाम, गुरोस्तस्य महात्मनः ।
मनसा धारकस्तस्य, 'नानकः' विरलो भृवि ॥

चौदहवीं पउड़ी

मंनै मारिंग काठ न पाइ ॥
मंनै पित सिउ परगटु जाइ ॥
मंनै मगु न चलै पंथु ॥
मंनै धरम सेती सनबंधु ॥
ऐसा नाम निरंजनु होइ ॥
जे को मंनि जाणै मिन कोइ ॥

चतुर्दशं सोपानम्

मार्गे न जायते बाधा, गुरु-शिक्षानुसारिणः ।
एवं च जायते लोकः, पुण्य-कीर्त्योः सुभाजनम् ॥
गुरु वाणी-प्रभावेण, सन्मार्गं न जहाति सः ।
पन्थाश्च सरलस्तस्यारिवलकण्टक-वर्जितः ॥
कर्त्तव्यं वस्तुतो वेत्ति, धर्मं वेद यथार्थतः ।
यमंगी कुरुते मार्गं, न ततो विचलत्यथो ॥
पूतं निरञ्जनं नाम, गुरोस्तस्य महात्मनः ।
मनसा धारकस्तस्य, 'नानकः' विरलो भुवि ॥

पंदरहवीं पउड़ी

मंनै पावहि मोख दुआह ॥
मंनै परवारै साधाह ॥
मंनै तरै तारे गुह सिख ॥
मंनै तरै तारे गुह सिख ॥
मंनै नानक भवहि न भिख ॥
ऐसा नाम निरंजन होइ ॥
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥

पञ्चदशं-सोपानम्

गुरु-शिक्षां न्चरञ्जीवो, मुक्ति-द्वारं हि विन्दति।
परिवारः कुटुम्बो वा, साधु स्तस्य प्रजायते॥
परिवारः कुटुम्बो वा, साधु स्तस्य प्रजायते॥
तरतीह स्वयं मन्ता, दुस्तरं भव-सागरम्।
तारयेच्छिष्य वर्गच, गुरु-शिक्षा-प्रदायकः॥
सुशिक्षां मानवः प्राप्य, द्वारि द्वारि न भिक्षते॥
प्राणी प्राप्य गुरोर्वाणीं, किमप्यन्यन्न याचते॥
अस्ति निरञ्जनो देवः, तादृशः परमाऽद्भुतः।
सुजनो मोदते लोके, मनसा तस्य धारकः॥

सोलहर्वी पउड़ी

पंच परवाण पंच परधान ॥ पंचे पावहि दरगहि मानु ॥ पंचे सोहहि दरि राजानु ॥ पंचा का गुरु, एकु धिआनु।। जे को कहै करै वीचार ॥ करते कै करणै नाही सुमार ॥ धौलु धरमु दइआ का पूतु ॥ संतोख थापि-रिखआ जिनि सूति ॥ जो को बुझै होवै सचिआरु ।। धवलै उपरि केता भार ॥ धरती होरु परै होरु होरु ॥ तिस ते भार तलै कवणु जोरु ॥ जीअ जाति रंगा के नाव।। सभना लिखिआ वुड़ी कलाम ॥ एहु लेखा लिखि जाणै कोइ।। लेखा लिखिआ केता होइ ॥ केता ताणु सुआलिहु रूपु ॥ केती दाति जाणै कौणु कूतु ।। कीता पसाउ एको कवाउ ॥ तिस ते होए लख दरीआउ॥

षोडशं सोपानम्

एवं विधगुणोपेतः, पश्चमुख्यः प्रजायते । पञ्चानां वा प्रधानो, इसौ गुरौ श्रद्धा विशेषत: ॥ एतै हिं प्राप्यते मानो, गुरोगेहि विशेषत:। पञ्चमुख्याः सुशोभन्ते, द्वारि राज्ञां समादृताः ॥ ननु पञ्चाग्रणी भ्यस्तु, गुरु-ध्यानं विशिष्यते । विवादाऽवसरे चाऽपि, पश्चमुख्यो विचारकः ॥ "कर्तार" कर्मणामन्तो, दृश्यते न महीतले। धराभृद् वृषभस्तावद्, दया-धर्म सुतो मत: ॥ वृषभस्य प्रभावेण, सन्तुष्टि भीवि जायते। स सत्यवान्न सन्देहो, मर्म वेदाऽस्य य: पुमान् ॥ बिभर्ति वृषभो भारं, कियन्मात्रं तथास्थित: ? अपि भूमे: परा भूमि, स्ततश्चाडपि पराधरा ? स सर्वो वृषभे भारो, कस्याडधारेण संस्थित: ? नित्यं न वा प्रजायन्ते, जीवा: सृष्टि: सनातनी ॥ जीवानां गणनां कर्तुं, शक्तः कोऽस्ति नरो भुवि ? इतिहास: स जीवानां, कियन्मात्रो भविष्यति ? सृष्टि-कर्तुरहो शक्ति, रहो सौन्दर्यमद् भुतम्। अहो रूप महोदानं, को वा दातु मलं भवेत् ? गुरोस्तस्य निदेशेन, सृष्टि जीता सविस्तरा। वहन्ति सरितोऽसंख्या, निदेशेन गुरोर्विभो: ॥

कुदरित कवण कहा वीचारू ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तु सदा सलामित निरंकार ॥

कः स्यात् त्वद् गुण संगाने, तुभ्यं वाऽऽत्माऽर्पणे क्षमः। यत्कर्म रोचते तुभ्यं, तद् भद्रं नेह संशयः॥ हे गुरो ! हे निराकार ! हे प्रभो ! हे निरञ्जन ! त्वमेव जगदाधार स्त्वं सत्यः परिकीर्तितः॥

सतारहवीं पउड़ी

असंख जप असंख भाउ ।।
असंख पूजा असंख तप ताउ ।।
असंख गरंथ मुखि वेद पाठ ॥
असंख जोग मिन रहिह उदास ॥
असंख भगत गुण गिआन वीचार ॥
असंख सती असंख दातार ॥
असंख सूर मुह भख सार ॥
असंख मोनि लिव लाइ तार ॥
कुदरित कवण कहा वीचाह ॥
वारिआ न जावा एक वार ॥
जो तुधु भावै साई भली कार ॥
तु सदा सलामित निरंकार ॥

सप्तदशं-सोपानम्

असंख्यं जप्यते मन्त्रो, भारते सादरं नरै: ।

असंख्यं क्रियते भक्ति, रसंख्यैरिष्ट सिद्धये ॥

पूजायाश्च प्रकारोऽपि, संख्यातीतो विराजते ।

तपोऽपि तप्यते साधु, संख्यातीतं मनीिषिभि: ॥

असंख्या मानवाः सन्ति, साम्प्रतं तेऽपि भारते ।

येषां वेदादयो ग्रन्थाः, कण्ठस्थाः सन्ति पावनाः ॥

असंख्या योगिनश्चात्र, नियतं ब्रह्मचारिणः ।

विषयेभ्य उदासीन-मनसः पर्यटन्ति च ॥

असंख्या भुविभक्तास्ते, ज्ञानिनो गुणिनश्च ये ।

पतिव्रता असंख्याश्च, वर्तन्ते भुवि सर्वतः ॥

कः स्यात् त्वद् गुण-संगाने, तुभ्यं वाऽऽत्माऽपीणे क्षमः ।

यत् कर्म रोचते तुभ्यं, तद् भद्रं नेह संशयः ॥

हे गुरो ! हे निराकार ! हे प्रभो ! हे निरञ्जन !

त्वमेव जगदाधार स्त्वं सत्यः परिकीर्तितः ॥

अठारहवीं पउड़ी

असंख मूरख अंध घोर ॥
असंख चोर हराम खोर ॥
असंख अमर किर जाहि जोर ॥
असंख गलवढ हितआ कमाहि ॥
असंख पापी पापु किर जाहि ॥
असंख मलेछ मलु भिख खाहि ॥
असंख मलेछ मलु भिख खाहि ॥
असंख निंदक सिरि करिह भार ॥
नानकु नीचु कहै वीचार ॥
वारिआ न जावा एक वार ॥
जो तुधु भावै साई भली कार ॥
तु सदा सलामित निरंकार ॥

अष्टादशं सोपानम्

अथापीह महामूर्खा, घोरा बुद्धि-विवर्जिताः !

असंख्यास्तस्कराचाऽत्र, विटा धूर्ता अनेकशः ॥

संख्यातीता जनाश्चेह, पीडयन्ति निरागसः ।

असंख्या पापिनः पाप माचरन्ति सदा भुवि ॥

मिथ्याचारा असंख्याश्च, मिथ्या चक्रे भ्रमन्ति च ।

म्लेच्छा वा गणनातीताः, कुभक्ष्यं भुञ्जते सदा ॥

असंख्या निन्दकाश्चेह, पाप भारेण मिञ्जताः ।

विनीतः 'नानकः' प्राह, प्राणिनां हित काम्यया ॥

कः स्यात् त्वद् गुण संगाने, तुभ्यं वाऽऽत्मार्पणे क्षमः ।

यत्कर्म रोचते तुभ्यं, तद् भद्रं नेह संशयः ॥

हे गुरो । हे निराकार ! हे प्रभो ! हे निरञ्जन !

त्वमेव जगदाधार स्त्वं सत्यः परिकीर्तितः ॥

उन्नीवीं पउड़ी

असंख नाव असंख थाव ॥ अगंम अगंम असंख लोअ ॥ असंख कहहि सिरि भारु होइ॥ अखरी नामु अखरी सालाह।। अखरी नामु अखरी सालाह ॥ अखरी गिआनु गीत गुण गाह ॥ अखरी लिखणु बोलणु बाणि ॥ अखरा सिरि संजोगु बखाणि ॥ जिनि एहि लिखे तिसु सिरि नाहि॥ जिव फुरमाए तिव तिव पाहि॥ जेता कीता तेता नाउ॥ विणु नावै नाही को थाउ ॥ कुदरति कवण कहा वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तु सदा सलामित निरंकार ॥

एकोनविंशं सोपानम्

असंख्या न्यभिधानानि, स्थानानि दुर्गमानि च।
गुरोरसंख्य-शब्देन, वर्णनाऽपि न साम्प्रतम् ॥
अक्षरं हि गुरो नीम, तेन श्लाघा मनीषिणः ।
विशेष भाषया देवं, जनास्तं पर्युपासते ॥
अक्षरं हि गुरो ज्ञानं, गुहस्तेनिह गीयते ।
तेनैव लिख्यते गाथा, कीत्यति तेन चैव सा ॥
तेन चैव हि सम्बन्धो, व्यज्यते ब्रह्म जीवयोः ।
सम्बन्धो विहितो येन, सोऽक्षरात्परतः स्मृतः ॥
यथा भवेद गुरो राज्ञा, तथैवाप्नोति मानवः ।
न किचिदस्ति तत्स्थानं, यत्तन्नाम्नो हि रिच्यते ॥
कः स्यात्त्वद् गुण संगाने, तुभ्यं वाऽऽत्मार्पणे क्षमः
यत्कर्म रोचते तुम्यं, तद् भद्रं नेह संशयः ॥
हे गुरो ! हे निराकार! हे प्रभो ! हे निरञ्जन ।
त्वमेव जगदाधार स्त्वं सत्यः परिकीर्तितः ॥

बीहवीं पउड़ी

भरीऐ हथु पैरु तनु देह ।।
पाणी धोतै उतरसु खेह ॥
मूत पलीती कपडु होइ ॥
दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ ॥
भरीऐ मित पापा कै संगि ॥
ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥
पुंनी पापी आखणु नाहि ॥
करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥
आपे बीजि आपे ही खाहु ॥
नानक हुकमी आवहु जाहु ॥

विंशं सोपानम्

रजो-लिप्तानि गात्राणि, शोध्यन्ते वारिणा यथा।
मल-लिप्तानि वासांसि, क्षाल्यन्ते फेनिलेन च ॥
एवं पापमतेः संगाद्, मनश्चेन्मलिनं भवेत्।
शोधितुं शक्यते ताव, त्तद् गुरोर्नाम वारिणा ॥
पुण्यवानथवा पापी, वार्ता-मात्रं न विद्यते ।
क्रियते यादृशं कर्म, लिख्यते तादृशं फलम् ॥
उप्यते यादृशं बीजं, प्राप्यते तादृशं फलम् ।
येनैव चोप्यते बीजं, फलं तेनैव भुज्यते ॥
'नानकः' सकलो जीवो, गुरोराज्ञानुसारतः ।
स्रियते जायते चाऽपि, यातायात-भ्रमीं गतः ॥

इक्कीवीं पउड़ी

तीरथु तपु दइआ दतु दानु ॥ जो को पावै तिल का मानु ॥ सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ।। अंतरगति तीरिथ मलि नाउ ॥ सिभ गुण तेरे मैं नाही कोइ॥ विणु गुण कीते भगति न होइ।। सुअसति आधि बाणी बरमाउ ॥ सति सुहाणु सदा मनि चाउ ॥ कवण सु वेला वखतु कवणु कवण थिति कवणु वार ॥ कवणि सि रुती माहु कवणु होआ आकारु ॥ वेल न पाईआ पंडती जि होवै लेखु पुराणु ॥ वखतु न पाइओ कादीआ जि लिखनि लेखु कुराणु ॥ थिति वारु न जोगी जाणै रुति माहु ना कोई।। जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई।। किवकरि आखा किव सालाही किउ वरनी किव जाणा !! नानक आखणि सभु को आखै इकद् इकु सिआणा ॥ बडा साहिबु वडी नाई कीता जा का होवै।। नानक जे को आपी जाणै अगै गइआ न सोहै ॥

एकविंशं सोपानम्

कणोऽप्यासादितो येन, गुरोस्तन्नाम वारिणः। स्नातं तीर्थे तपस्तप्तं, तेन चाडचरिता दया ॥ दानं चाडचरितं चाडपि, श्रवणं मननं कृतम्। भावितं चाऽपि मनसा, तीर्थमान्तरिकं महत्॥ गुरो ! त्वयि गुणा: सर्वे, मिय कोऽपि न विद्यते। गुणै र्विना गुरो भिक्त:, पुंसो जातु न जायते ॥ नमो ब्रह्मस्व रूपाय, वाणी-रूपाय ते नम:। सच्चिदानन्द रूपाय, सदिच्छा रूपिणे नमः॥ कः क्षणः ? समयः को वा ? का तिथि वीसरभ्य कः ? ऋतु र्वा कतमो मासो, यदासृष्टिरजायत ? पुराणे लिखितं नेदं, पण्डिते नविगम्यते । कुराने लिखितं नास्ति, कादिभिनैव बुध्यते ॥ तिथि वारं स नो वेद, योगिनामीश्वरोऽपि य:। ऋतुं नैव विजानीते, मासं कोऽपि मुनीश्वर: ॥ कालं तं वेद धाताऽसौ, यः सृष्टि मसूज त्स्वयम् । वारं तिथिं तथा मासं, सर्वं वेद सनातन: ॥ कथं तं कीर्तये देवं, गायेयं च कथं नु तम् ? प्राज्ञंमन्यो ह्ययं लोक:, नानक स्त्वाह संनत: ॥ महानधिपतिस्तस्य, महन्नाम जगत्पते:। तेनैव विहितं लोके, जायतेऽपरिहार्यत: ॥ नानको मन्यते यस्तु, स्वात्मानं कर्म कारिणम् । अहम्मन्यः परत्रासौ, शोभते न कदाचन ॥

बाईवीं पउड़ी

पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥ ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहिन इक बात ॥ सहस अठारह कहिन कतेबा असुलू इकु धातु ॥ लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु ॥ नानक वडा वाखीऐ आपे जाणै आपु ॥

द्वाविंशं सोपानम्

अकाशानि ह्यनन्तानि, पातालानि च लक्षशः । वेदा अपि विदुर्नान्तं, सृष्ट्याः सृष्टि-सृजोऽपि वा ॥ अष्टादश सहस्राणि, जगन्तीति श्रुतं परम् । परं ब्रह्मैकमेवेति, तत्त्वमेकं विबोधत ॥ लेखकस्य भवेदन्तो, न तु लेखः समाप्यते । 'नानकः' स महानस्ति, वेदाऽत्मानं च स स्वयम् ॥

तेईवीं पउड़ी

सालाही सालाहि एती सुरित न पाईआ ॥ नदीआ अतै वाह पविह समुंदि न जाणी अहि ॥ समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु ॥ कीड़ी तुलि न होवनी जे तिसुमनहु न वीसरिह ॥

त्रयोविंशं सोपानम्

स्तोतार: स्तुवते नित्यं, गुरोरन्तं न यान्ति च । वारिधिं यान्ति सरित:, गाम्भीर्यं न परं विदु: ॥ आसमुद्र क्षितीशा ये, मेरु-तुल्य-विभूतय: । न तेऽपि तुल्या: कीटेन, त्वत्परायण चेतसा ॥

चौबीवीं पउड़ी

अंतु न सिफती कहणि न अंतु ॥ अंतु न करणै देणि न अंतु ॥ अंतु न वेखणि सुणणि न अंतु ॥ अंतु न जापै किआ मिन मंतु ॥ अंतु न जापै कीता आकारु ॥ अंतु न जापै पारावार ॥ अंत कारणि केते बिललाहि॥ ता के अंत न पाए जाहि॥ एहु अंत न जाणै कोइ।। बहुता कहीऐ बहुता होइ॥ वडा साहिबु ऊचा थाउ।। **ऊचे** उपरि ऊचा नाउ ॥ एवडु ऊचा होवै कोइ॥ तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ॥ जेवडु आपि जाणै आपि आपि ॥ नानक नदरी करमी दाति ॥

चतुर्विशं सोपानम्

गुरोर्गुणा अनन्तास्ते, गुणगाथा अनेकशः ।

''कर्तार'' कर्मणामन्तो, दृश्यते न महोतले ॥
अनन्तानि च दानानि, विभोश्चित्राणि सर्वथा ।
दृश्यानामथ श्रव्याणा, मन्तो न वसुधातले ॥
अन्तो न ज्ञायते तस्य, चित्ते कृत्वा करोतियत् ।
सृष्ट्याः सृष्टि-सृजश्चापि, सीमा नैवावबुध्यते ॥
अन्तं यातुमनन्तस्य, भवन्त्येके समाकुलाः ।
न चान्तमधिगच्छन्ति, स हि वाचोऽतिरिच्यते ॥
महानधिपति स्तस्य, परं धाम जगत्पतेः ।
परात्परतरं चाऽपि, तस्य नाम शुभावहम् ॥
तत्तुत्य-महिमैवालं, ज्ञातुं तं स्यान्महोदयः ।
महिम्ना यावतोपेत, स्तत् स एवावगच्छिति ॥
यदेव प्राप्यते ऽस्माभि, स्तत्तस्यैव प्रसादतः ।
तस्यैव च कृपा दृष्ट्या, सर्वमेतदशीमहि ॥

पचीवीं पउड़ी

बहुता करमु लिखिआ ना जाइ।। बडा दाता तिलु न तमाइ॥ केते मंगहि जोध अपार ॥ केतिआ गणत नही वीचार ॥ केते खिप तुटहि वेकार ॥ केते लै लै मुकर पाहि॥ केते मूरख खाही खाहि॥ केतिआ दूख भूख सद मार ॥ एहि भि दाति तेरी दातार ॥ बंदिखलासी भाणै होइ॥ होरु आखि न सक्कै कोइ ॥ जे को खाइकु आखणि पाइ॥ ओहु जाणै जेतीआ मुहि खाइ।। आपे जाणै आपे देइ॥ आखिह सि भि केई केइ॥ जिसनो बखसे सिफति सालाह ॥ नानक पातिसाही पातिसाहु॥

पंचविंशं सोपानम्

वदान्यता गुरोस्तस्य, लिखितुं नैव शक्यते । महा दाता हि लोकस्य, सर्वदा सर्वदः स्मृतः ॥ नाथन्ते लोकनाथं तं, सुभटा अपि मानवाः । अन्येऽपि बहवो लोका, भिक्षन्ते तं धनाशया ॥ अनेके भोग माभोज्य, भोगभुक्ता भवन्ति हि । श्राम्यन्तिच चाथ ताम्यन्ति, स्व सत्तां नाशयन्ति च ॥ केचिद् दानं समासाद्य, दातारं विस्मरन्त्हो । इतरे मोह संमुढा, भुअते हि निरन्तरम् ॥ दृश्यन्ते पीडिताः केचिद्, दुःसैः क्लेशैः क्षुघादिभिः। एतान्यपि हि दानानि, महोदारस्य दानिनः ॥ प्राप्यते बन्धनान्मुक्ति, गुरोरेव प्रसादतः । न तर्दन्यः क्षमः कश्चिद्, विधातुं मुक्ति-घोषणाम् ॥ उत्सहेताऽत्र विषये, वक्तुं वा यदि कश्चन । आत्मानं चाडतिमन्येत, स पराभव माप्नुयात् ॥ मनोरथान्स नो वेद, ताँश्चपूरयति स्वयम् । विरला ज्ञानिनो लोके, तत्त्व मेतत्प्रचक्षते ॥ ये ऽनुगृहीता दानेन, स्तुति-गान गुणात्मना । वस्तुतस्ते हि सम्राजः, सर्वोच्चं पद मास्थिताः ॥

छब्बीवीं पउड़ी

अमुल गुण अमुल वापार ॥ अमुल वापारीए अमुल भंडार ॥ अमुल आवहि अमुल लै जाहि ॥ अमुल भाइ अमुला समाहि॥ अमुलु धरमु अमुलु दोबाणु ॥ अमुलु तुलु अमुलु परवाणु ॥ अमुलु बखसीस अमुलु नीसाणु ॥ अमुलु करमु अमुलु फुरमाणु ॥ अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ ॥ आिं आिंख रहे लिव लाइ।। आखिह वेद पाठ पुराण ॥ आखिह पड़े करिह विखआण ॥ आखहि बरमे आखहि इंद ॥ आबहि गोपी तै गोविंद ॥ आबहि ईसर आबहि सिध ॥ आरवहि केते कीते बुध ॥ आखिह दानव आखिह देव ॥ आखिह सुरिनर मुनि जन सेव ॥ केते आखहि आखणि पाहि ॥ के कहि कहि उठि उठि जाहि ॥ एते कीते होरि करेहि॥

षड्विंशं सोपानम्

गुरोर्गुणा अमूल्यास्ते, व्यापारोऽमूल्य एव च । गुण-व्यापारिणोऽमूल्या, भण्डाराश्चाऽपि तादृशाः ॥ अमूल्या ग्राहकास्तेषां, ये समायान्ति यान्ति च। प्रेम-भावोप्य मूल्योऽसौ, तल्लीनाश्चाऽपि तादृशाः ॥ प्रभु-धर्मोऽप्य मूल्योऽस्ति, धर्माधिकरणं तथा। मानोन्माने अमूल्ये ते, याभ्यां नः कर्म मीयते ॥ प्रभु प्रसादोऽमूल्योऽस्ति, तच्चिन्हं चाऽपि तादृशम् । दया भावोऽप्य मृल्योऽस्ति, तदादेशोऽपि तद्विधः ॥ अमुल्यं तस्य सर्वस्वं, तच्च वाचामगोचरम् । समारस्यातुं यतन्ते ये, ह्यन्तेमौनं भजन्ति ते ॥ वेदाश्चाथ पुराणानि, तं गायन्ति स्तुवन्ति च । समाचष्टे स्वयं ब्रह्मा, व्याचष्टे च शचीपति: ॥ गोपी कृष्णस्तथा रुद्र:, सिद्धा बुद्धाः स्तुवन्ति तम्। देवाश्च दानवाश्चाऽपि, भू-सुरा मुनयस्तथा ॥ सम्प्रत्याचक्षते केचिदाख्यास्यन्ति च केचन । आख्याय च गताः केचिद्, व्याख्यातारो मुनीश्वराः ॥ यावन्तो रचिता लोके, व्याख्यातारस्ततोऽपि चेद्। भूयांस: स्युस्तथाऽपि स्या, दव्याख्येयो महान् गुरु: ॥ कामरूपः प्रभुलेकि, यथाकामं महीयते । 'नानकः' स स्वयं वेद, यावान्स यादृशश्च सः ॥

ता आखि न सकिह केई केइ ॥
जेवडु भावै ते वडु होइ ॥
जेवडु भावै तेवडु होइ ॥
नानक जाणै साचा सोइ ॥
जे को आखै बोलुविगाडु ॥
ता लिखीऐ सिरि गावारागावाह ॥

यस्तु कश्चित्तदीदृक्तां तदियत्तां च जातुचित्। परिच्छेत्तुं प्रयतते यात्यसौ वचनीयताम्॥

सताईवीं पउड़ी

सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले ॥ बाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे ॥ केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे ॥ गावहि तुहनो पउणु पाणी बैसंतरु गावै राजाधरमु दुआरे ॥ गावहि चितु गुपतु लिखि जाणिह लिखि लिखि धरमु वीचारे ॥ गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे ॥ गावहि इंद इदासणि बैठे देवतिआ दरि नाले।। गावहि सिध समाधी अंदरि गावनि साध विचारे ॥ गावनि जती सती संतोखी गावहि वीर करारे ॥ गावनि पंडित पड़नि रखीसर जुगुजुगु वेदा नाले ॥ गावहि मोहणीआ मनु मोहिन सुरगा पद्दआले।। गावनि रतनि उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले ॥ गावहि जोध महाबल सुरा गावहि खाणी चारे ॥ गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे ॥ सेई तुधनो गावहि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले ॥ होरि केते गावनि से मै चिति न आविन नानकु किआ वीचारे ॥ सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई ॥ है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई ॥ रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई।। करि करि वेखै कीता आपणा जिव तिस दी विड आई॥

सप्तविंशं सोपानम्

तद् गृहं कीदृशं स्यात्तद् गृह-द्वारं च कीदृशम् ? यत्र स्थित: प्रभो ! सृष्टिं, सकलां त्वंनिरीक्षसे ॥ भवन्ति विविधा नादा, अनन्ता वादकाः स्थिताः ॥ वाद्यं नानाविधं तत्र, वाद्यकै र्वाद्यते मुदा ॥ गीयन्ते राग रागिण्योऽनन्ता सन्ति च गायकाः । वायुश्चापश्च गायन्ति, स्तुतोऽग्निर्यम एव च ।। चित्र गुप्तः स्तवीति त्वां, धर्मराजस्य लेखकः । रुद्रो ब्रह्मा तथादेवी, स्तुवन्ति त्वां समाश्रिताः ॥ गायतीन्द्रः समासीन आसने स्वे सुरैः सह । समाधिस्थाः स्तुवन्तित्वां, सिद्धाश्च साधवस्तथा ॥ स्तुवन्ति यतयः सन्तो, वीराश्च यमिनश्च ये। पण्डिता ऋषयश्चाऽपि, युगं वेदविदो बुधाः ॥ स्वर्भू पाताल सुन्दर्यो, रत्नानि नव पंच च। अष्ट षष्ट्या समं तीर्थैः, स्तुतिं कुर्वन्त्यहर्निशम् ॥ गायन्ति त्वां हि योद्धारो, जीवाश्चाऽपि चतुर्विधाः । ब्रह्माण्डं चाऽखिलं स्तौति, विहितं विधृतं त्वया ॥ गायन्ति भक्तास्त्वद् भाव, माश्रिता: शरणागता: । अन्ये चाचिन्तिताभिष्या स्तत्सम्बन्धे किमुच्यताम् ? स एवाधिपतिः सत्यः, सत्य नामा सनातनः । विश्व सृट् स त्रिकालस्थो, उनश्वरः शाश्वतः स्मृतः ॥

जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु न करणा जाई।। सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई।।

नाना वर्ण विचित्रं च, विश्वं स सृजित स्वयम् । संभालयित चैवाऽसौ महिमानं स्वमाश्रितः ॥ यदेव रोचते तस्मै, तदेव कुरुते प्रभुः । इदमेवं कुरुष्वेति, नाऽदेष्टुं स हि शक्यते ॥ प्रभू राजाधिराजोऽसौ, सर्वोच्चं पदमास्थित ः। वर्तितव्यं तदाऽस्माभि, स्तदिच्छा-वश-वर्तिभिः ॥

अठाईवीं पउड़ी

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करिह बिभूति ॥ खिथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति ॥ आई पंथी सगल जमाती मिन जीतै जगु जीतु ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहित जुगु जुगु एको वेसु ॥

अष्टाविंशं सोपानम्

तृष्टि मृद्रा श्रमः पात्रं, ध्यानं भस्म भवेदथ ।
कालः कन्था तनुः कन्येवास्पृष्टा मृनि जीवनम् ॥
प्रभु श्रद्धा च दण्डः स्याद्, वसुधा स्यात्कुटुम्बकम् ॥
तथा च विश्व विजय-तृत्यः स्यान्मनसो जयः ॥
एषा हि भावना भद्रा, 'आयिपन्थे' प्रकीर्तिता ।
नमस्कारः सदा कार्य, स्तस्मै विश्व स्वरूपिणे ॥
नमोठ नीलाय शीलाय, साद्याय चाप्यनादये ।
अनाहताय देवाय, सदैव सम रूपिणे ॥

उन्नतीवीं पउड़ी

भुगति गिआनु दइआ भंडारणि घटि घटि वाजिह नाद ॥ आपि नाथु नाथी सभ जा की रिधि सिधि अवरा साद ॥ संजोगु विजोगु दुइ कार चलाविह लेखे आविह भाग ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ अनिद अनाहित जुगु जुगु एको वेसु ॥

एकोनत्रिंशत्तमं सोपानम्

भोजनं स्याद् गुरोर्ज्ञानं, येन तृप्तिरनुत्तमा।
अक्षय्यः स्याद् दया कोषो, नादोऽनाहत आनदेत्।।
नाथः स्वयं प्रभु र्येन, नाथितं सकलं जगत्।
आस्वादस्त्वपरः प्रोक्त, ऋद्धेः सिद्धेरनुत्तमः।।
संयोगश्च वियोगश्च, कमहितू उभौ स्मृतौ।
कर्मलेखानुसारं हि, भागमाप्नोति मानवः।।
सर्वस्य जगतो धात्रे, नवनिर्माण-शालिने।
नमस्कारः सदा कार्य, स्तस्मै विश्व स्वरूपिणे।।
नमोऽ नीलाय शीलाय साद्याय चाप्यनादये।
अनाहताय देवाय सदैव सम-रूपिणे।।

तीहवीं पउड़ी

एका माई जुगित विआई तिनि चेले परवाणु ।। इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु ॥ जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु ॥ ओहु वेखै ओना नदिर न आवै बहुता एहु विडाणु ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहित जुगु जुगु एको वेसु ॥

त्रिंशत्तमं सोपानम्

कयापि, प्रकृतिर्माया, युक्त्या सूते सुत-त्रयम् । ब्रह्माणं सृष्टि-कर्तारं, विष्णुं भण्डारिणं तथा ॥ धर्मीधिकारिणं चाडिप, शम्भुं लोक नियामकम् । यथास्मै रोचते विश्वं, तथाइसौ तन्नियच्छिति ॥ वीक्षते सकलं लोकं, स्वयं केनाप्यवीक्षितः । इदं रहस्यं लोकाना-मतीवाश्चर्य-कारणम् ॥ सर्वस्य जगतो धात्रे नव-निर्माण शालिने । नमस्कारः सदा कार्यस्तस्मै विश्व-स्वरूपिणे ॥ नमो इ नीलाय शीलाय साद्याय चाप्यनादये । अनाहताय देवाय सदैव सम-रूपिणे ॥

इक्तीवीं पउड़ी

आसणु लोइ लोइ भंडार ॥ जो किछु पाइआ सु एका वार ॥ किर किर वेखै सिरजणहार ॥ नानक सचे की साची कार ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहित जुगु जुगु एको वेसु ॥

एकत्रिंशत्तमं सोपानम्

प्रतिलोकं स्थितो देव, आसनं स्वमधिष्ठितः । उपासनं च भण्डाराः, सकृदेव सुपूरिताः ॥ नानकः प्राह सत्या सा, सृष्टिः सत्येन निर्मिता । सर्जं सर्जं बिभर्तीह विश्व सृड् निखिलं जगत् ॥ सर्वस्य जगतो धात्रे नव-निर्माण-शालिने । नमस्कारः सदा कार्यस्तस्मै विश्व स्वरूपिणे ॥ नमोऽ नीलाय शीलाय, साद्याय चाप्यनादये । अनाहताय देवाय सदैव समरूपिणे ॥

बत्तीवीं पउड़ी

इकदू जीभौ लख होहि लख होवहि लख बीस ॥ लंखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस ॥ एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ होइ इकीस ॥ सुणि गला आकास की कीटा आई रीस ॥ नानक नदरी पाईऐ कूड़ी कूड़ै ठीस ॥

द्वात्रिंशत्तमं सोपानम्

एका जिह्वा मनुष्यस्य, लक्ष-संख्यां गता भवेत् । कोटिशोर्ड्बुदशो वार्डिप, कीर्तयेदेक मेव सः ॥ सोपानैः शक्यते प्राप्तुं, स्वामिनः परमं पदम् । तत्प्राप्यारुत्मा सदानन्दं, ब्रह्म सायुज्य माप्नुयात् ॥ प्रभो रहस्यं विज्ञाय, कीटस्तादात्म्यमिच्छति । तेन, तत्तु भवेत्तस्य, प्रसादादेव नान्यथा ॥

तेत्तीवीं पउड़ी

आखणि जोरु चुपै नह जोरु ॥
जोरु न मंगणि देणि न जोरु ॥
जोरु न जीवणि भरणि नह जोरु ॥
जोरु न राजि मालि मनि सोरु ॥
जोरु न सुरती गिआनि वीचारि ॥
जोरु न जुगती छुटै संसारु ॥
जिसु हथि जोरु करि वेसै सोइ ॥
नानक उतमु नीचु न कोइ ॥

त्रयस्त्रिंशत्तमं सोपानम्

नाऽध्यातुं शक्यते किचिन्न वा मौनेन वर्तितुम्।
नाऽपि वा याचितुं शक्ति, नीपि दातुं हि किहिचित्।।
न शक्ति जीवितुं वाऽपि, न मर्तुं स्वेच्छया तथा।
न शास्तुं धनमाप्तुं वा, यदर्थं रूयतेतमाम्।।
विभुं ज्ञातुं तथा ध्यातुं, मुक्ति-युक्तिं व चिन्तितुम्।
न शक्ति विद्यते पुंसि, शक्ति-होनो हि मानवः॥
न नीचो भवितुं शक्तः, कश्चिदुत्तम एव वा।
स्वेच्छया मानवो जातु प्रभोरिच्छा बलीयसी।।

चौंतीवीं पउड़ी

राती हती थिती वार ॥
पवण पाणी अगनी पाताल ॥
तिसु विचि धरती थापि रखी धरम साल ॥
तिसु विचि जीअ जुगित के रंग ॥
तिन के नाम अनेक अनंत ॥
करमी करमी होइ वीचाह ॥
सचा आपि सचा दरबाह ॥
तिथै सोहिन पंच परवाणु ॥
नदरी करिम पवै निसाणु ॥
कच पकाई ओथै पाइ ॥
नानक गइआ जापै जाइ ॥

चतुस्त्रिंशतमं सोपानम्

जल वाप्वग्नि=पातालं, ऋतुं रात्रिं तिथिं तथा । अनुव्यामां भुवं चक्रे. धर्मशालामिव स्थिराम् ॥ धरायां विविधा जीवा नानारंगाभिधाश्च ये । शुभा शुभ-फल प्राप्ति स्तेषां कर्मानुसारतः ॥ सत्योऽधिपतिस्तत्र, तस्याऽधि करणं तथा । पञ्च-मुख्यैः कृताशंसास्तद्धाम पथ वर्तिनः ॥ तत्कृपा भाजनं भूत्वा, शोभां विन्दन्ति मानवाः । योग्या योग्य-परीक्षा स्याद्, गत्वा तत्राऽह नानकः ॥

पैंत्तीवीं पउड़ी

धरम खंड का एहो धरमु ॥

नेते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस ॥
केते बरमे घाड़ित घड़ी अहि रूप रंग के वेस ॥
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस ॥
केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस ॥
केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस ॥
केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुद ॥
केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिद ॥
केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु ॥

पञ्जत्रिंशत्तमं सोपानम्

धर्मखण्डोऽयमाख्यातो, ज्ञान-खण्डं निबोधत । अनन्ताः पावका आपो, वायवो विष्णवः शिवाः ॥ सृष्टि-सृजो ह्यनन्ताश्च, नानारूपसृजः स्मृताः । कर्म-भूमिश्च मेरुश्च, ध्रुवश्चेन्द्रश्च चन्द्रमाः ॥ सूर्यश्च मण्डलाश्चान्ये, सिद्धा बुद्धास्तथैव च । अनन्ताश्चैव नाथाश्च, देव्यो देवाश्च दानवाः ॥ मुनयश्चाऽपि रत्नानि, सागराश्चाय धातवः । श्रुतयश्चाऽपि भाषाश्च, महीपालाश्च सेवकाः ॥

छत्तीवीं पउड़ी

गिआन खंड महि गिआनु परचंडु ।।
तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु ॥
सरम खंड की आणी रूपु ॥
तिथै घाड़ित घडेंगिए बहुतु अनूपु ॥
ता कीआ गला कथीआ ना जाहि ॥
जे को कहै पिछै पछुताइ ॥
तिथै घड़ीऐ सुरित मित मिन बिधि ॥
तिथै घड़ीऐ सुरित मित मिन बिधि ॥

षट्त्रिंशत्तमं सोपानम्

ज्ञान-खण्डे प्रचण्डं तज्ज्ञानं सर्वत्र भासते।
तत्र नादविनोदा हि, तत्रैवाऽनन्द-कौतुकम् ॥
श्रम खण्डे तु सा वाणी, रूप-रूपा प्रकाशते।
तत्राऽचारो विशुद्धो हि, ग्राह्चते सर्व-मानवैः॥
अनाख्येया गतिः सा तुं, वक्तुं यस्तां तु चेष्टते।
पश्चात्तपेदनाख्यानाद्, गतेस्तस्याः स पूर्णतः॥
जायेत योगधीस्तत्र, मनस्तत्रामलं भवेत्।
भावना स्तत्र वीराणां, सिद्धानां च चकासति॥

सेंतीवीं पउड़ी

करम खंड की वाणी जोरू।। तिथै होरु न कोई होरु ॥ तिथै जोध महाबल सूर ॥ तिन महि रामु रहिआ भरपूर ॥ तिथै सीतो सीता महिमा माहि॥ ताके रूप न कथने जाहि॥ ना ओहि मरहि न ठागे जाहि॥ जिन कै रामु वसै मन माहि॥ तिथै भगत वसहि के लोअ।। करहि अनंदु सचा मनि सोइ॥ सच खंडि वसै निरंकारु॥ करि करि वेखै नदरि निहाल ।। तिथै खंड मंडल वरभंड ॥ जे को कथै त अंत न अंत॥ तिथै लोअ लोअ आकार ॥ जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार वेखै विगसै करि वीचार ॥ नानक कथना करड़ा साह ॥

सप्तत्रिंशत्तमं सोपानम्

कर्म खण्डे तु सा वाणी, शक्ति रूपेव भासते । तत्र योधाश्च शूराश्च, महाशक्ति-समन्विताः ॥ तत्रैव रामः संव्याप्त स्तत्र सीता पतिव्रता । तस्या रूप कथा नूनं, वाचातीता उदीरिताः ॥ येषां चित्ते स्थितो रामो, ये वा राम-परायणाः । आयुगं ते न नश्यन्ति, वंच्यन्ते न कथंचन ॥ अदब्धाश्चामरा जीवा रामो यत्र प्रकाशते । तत्र लोका महाश्लोकाः, प्रभोर्नाम परायणाः ॥ तद्धिनाम समास्वाद्य, सत्याङनन्दं भजन्ति ते । सत्य-खण्डे स्वयं वासं, निराकारः करोति सः ॥ कारं कारं जगत्सर्वं, बिभर्ति कृपया गुरुः । अनन्तं चैतद् ब्रह्माण्डं, नालं वक्तुं हि मानवः ॥ तत्र लोका महालोका, नानाकारा निरन्तरम्। यथा तत्र गुरोराज्ञा, तथा कर्म प्रजायते ॥ विचार्य सकलं ह्येतत्, प्रसादं सोऽधिगच्छति । वर्णनं पुनरस्याऽस्ति, कठिनं लोह-सार वत् ॥

अठत्तीवीं पउड़ी

जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु ॥ अहरणि मित वेदु हथीआरु ॥ भउ खला अगिन तप ताउ ॥ भांडा भाउ अंमृतु तितु ढालि ॥ घड़ीऐ सबदु सची टकसाल ॥ जिन कउ नदिर करमु तिन कार ॥ नानक नदरी नदिर निहाल ॥

अष्टात्रिंशत्तमं सोपानम्

शुद्धिः स्यात्पावकाधानी, धृतिनीडिंन्धमस्तथा । बुद्धिः कूटं भवेत्तत्र, गुरु-वाणी ह्ययोधनः ॥ भीश्च भस्ना तपोऽग्निश्च, भवेद् भावश्च भाजनम् ॥ अमृतस्य च पाकः स्यात्सत्यशब्दोऽभिपच्यताम् ॥ गुरोर्यत्र प्रसादः स्यात्तत्र स्युः सफलाः क्रियाः । कृपा दृष्ट्या गुरोरेव, कृतार्थं जायते जगत् ॥

सलोकु

पवणु गुरू पाणी पिता माता धरित महतु ॥ दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु ॥ चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि ॥ करमी आपो आपणी के नेडै के दूरि ॥ जिनी नामु धिआइआ गए मसकित घालि ॥ नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥

वायु गुरुः पिता वारि,
माता चाथ वसुन्धरा।
दिनंधाता निशाधात्री,
यदंके रमते जगत्॥

शुभानामशुभानां च,

कर्मणां निर्णयं गुरुः ।

धर्माधिकारी कुरुते,

फलं भुंक्ते च मानवः ॥

पुंसां कर्मानुसारेण, फलं भवति सर्वथा। सविधे सुकृतैर्वासो, दूरे दुष्कृत कर्मभि:॥

यै हिं ध्यातं गुरोर्नाम, कृतं तै र्जन्म सार्थकम् । भासते वदनं तेषां, मुच्यन्तेऽन्येऽपि तै: सह ॥

इति श्री जपु जी साहिब: ॥